थार मरुस्थल में फलोद्यान

HelpAge International
age helps

Gravis

थार मरूस्थल में फलोद्यान
2010

लेखक :

डॉ. हरि सिंह चंम्पावत

प्रकाशक :

ग्राविस

ग्रामीण विकास विज्ञान समिति

3/437, 458 मिल्कमेन कॉलोनी, पॉल रोड़

जोधपुर – 342008, राजस्थान

फोन : 0291-2785317, 2785549, 2785116

फैक्स : 0291 - 2785116

ईमेल : email@gravis.org.in

वेबसाइट : www.gravis.org.in

ISBN 978-81-977042-0-8

सहयोग :

हैडकॉन

हैल्थ एनवायरमेन्ट एण्ड डवलपमेन्ट कन्सोर्टियम

67/145, प्रताप नगर, सांगानेर

जयपुर – 302022, राजस्थान

फोन : 0141-2792994, 2790741

ईमेल : hedcon2004@yahoo.com

वेबसाइट : www.hedcon.org

© ग्राविस

यूरोपियन यूनियन एवं हैल्प एज इन्टरनेशनल (यू.के.) के आर्थिक सहयोग से पी.ओ.सी. परियोजना के अन्तर्गत प्रकाशित

प्राक्कथन

विश्व के सभी हिस्सों में वृद्ध संख्या का अनुपात बढ़ता ही जा रहा है। यही स्थिति भारत में भी बनी हुई है। वृद्धों की इस बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए उचित सुविधाओं व योजनाओं की कमी है, जिसके कारण बहुत से वृद्ध कठिनाईयों के साथ जीने को विवश हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में वृद्धों की स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक है।

राजस्थान का थार मरूस्थल, दूनिया का सबसे दुर्गम और शुष्क क्षेत्रों में से एक है। यह क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से कमज़ोर, संसाधनों की अल्पता से ग्रस्त और आर्थिक विकास के लिए अपर्याप्त स्त्रोत होने के कारण पिछड़ा क्षेत्र रहा है। इन सभी कारणों की वजह से यहाँ रहने वाली अधिकतर जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे का जीवन व्यतित कर रही है। यही कारण है कि ज्यादातर पुरूषों (युवकों) को क्षेत्र से बाहर पलायन करना पड़ता है और पीछे रहने वाले बुजुर्गों की जिम्मेदारियाँ बढ़ जाती है। यही नहीं बहुत से परिवार टूट भी जाते है और माता – पिता को उम्र के आखरी पड़ाव में विषम परिस्थितियों का सामना अकेले ही करना पड़ता है। इन विषमताओं को महसूस करते हुए और वृद्धों के प्रति बढ़ती अपेक्षा को देखते हुए ग्राविस द्वारा संचालित **''राजस्थान के कमजोर वर्गो में वृद्धों के नेतृत्व द्वारा निर्धनता उन्मूलन''** (POC) परियोजना जोधपुर और जैसलमेर में चलाई जा रही है।

परियोजना का मुख्य उद्देश्य वृद्धों को उनके अधिकारों से अवगत करवाना और उन्हें आत्मसम्मान से जीने की प्रेरणा देना है। परियोजना द्वारा वृद्धों के स्वास्थ्य, अधिकार, सामाजिक विषमताओं को आधार मानकर अपेक्षित गतिविधियाँ की जा रही है।

वृद्धों में जानकारी और जागरूकता बढ़ाने के लिए ग्राविस द्वारा यह पुस्तिका प्रकाशित की गई है। हैल्पेज इन्टरनैशनल और यूरोपियन यूनियन के सहयोग से यह पुस्तिका प्रकाशित की गई है। इस पुस्तिका के लेखन में डॉ. हरि सिंह चंम्पावत के सहयोग का धन्यवाद करती हूँ तथा इसके संकलन के लिए हैडकॉन संस्था और ग्राविस से जुड़े साथियों को धन्यवाद देती हूँ।

शशि त्यागी
सचिव

अनुक्रमणिका

(क) ग्राविस द्वारा उद्यानिकी ईकाई की स्थापना करवाना 5

(ख) फलोद्यान इकाई के लिये माहवार की जाने वाली कृषि क्रियाओं का वार्षिक कार्यक्रम 6

(ग) नींबू की खेती की उन्नत कृषि विधियां 8

(घ) गूंदा की खेती की उन्नत कृषि विधियां 11

(ड़) बेर की खेती की उन्नत कृषि विधियां 12

(च) कीट रोगों से पौधों के बचाव के लिए घरेलू उपचार 15

(छ) दीमक के उपचार के लिए घरेलू उपचार 16

(ज) वर्मी कम्पोस्ट 17

(क) ग्राविस द्वारा उद्यानिकी ईकाई की स्थापना करवाना

ग्राविस द्वारा विभिन्न प्रकार की योजनाओं के तहत् उद्यानिकी ईकाई की स्थापना करवाई जाती है। लाभान्वित होने वाले व्यक्ति का चयन करते वक्त इस बात का पूर्ण ध्यान रखा जाता हैं कि वह आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो और जो फलदार पौधे लगाने एवं उन्हें पनपाने में रूचि रखता हो।

परियोजना (POC) के तहत लाभान्वित होने वाले चयनित वृद्ध द्वारा स्वयं की भागीदारी के रूप में फलदार पौधे लगाने हेतु निश्चित माप एवं आकार के खड्डे स्वयं के द्वारा खोदे जायेंगे एवं देशी खाद (मिंगनी या गोबर का सडा हुआ खाद) स्वयं के द्वारा पौधे लगाते वक्त प्रयोग में लिया जायेगा। ग्राविस द्वारा योजना के तहत क्षैत्र में आसानी से उगाये जाने वाले पौधें एवं देशी खाद तथा दीमक नियंत्रण हेतु नीम की खली तथा तम्बाकू का चूरा (डस्ट) दी जाती हैं। कुल 3 प्रकार फलदार पौधों में के कलमी बेर (सेव–गोला) लसोडा (बड़ा गूंदा) तथा कागजी नींबू के पौधे उपलब्ध कराये जाते हैं।

नर्सरी में फलदार पौधों का चयन करते वक्त ध्यान रखने योग्य बातें

1. जिन फलदार पौधों का नर्सरी में चयन किया जा रहा हैं वे किसी प्रकार के रोग एवं कीट से ग्रसित ना हो यानि स्वस्थ पौधों का ही चयन करें।
2. चयन किये जाने वाले गूंदा एवं नींबू के पौधे की थैली की लम्बाई (ऊँचाई) मिट्टी की भरी थैली से ऊपर कम से कम 1.5 से 2 फीट के बीच होनी चाहिए।
3. कलमी बेर (सेव, गोला) के मामले में कलम वाली डाली की लंबाई एक फीट से डेढ़ फीट होनी चाहिये एवं किसी भी प्रकार की देशी फुटान नहीं होनी चाहिये।
4. यह सुनिश्चित किया जाय कि थैली में भरी हुई मिट्टी एवं खाद का सही मिश्रण भरा हो ताकि पौधे को थैली से हटाते वक्त उसकी बाल (जड़े) बिखरे नहीं।
5. नर्सरी से पौधों को जब लेकर आना हो तो थैलियों को क्यारी (बेड) से एक रोज पहले निकाल कर रखें ताकि कोई कमजोर पौधा हो तो नर्सरी में वहीं पर मर (मोर्टेलिटी) जायेगा और आप फिर जिन्दा पनपने वाले पौधे ही लेजा पायेंगे।
6. मौसम अनुकूल होने पर ही फलदार पौधों को नर्सरी से उठाना चाहिये, ताकि रास्ते में परिवहन के दौरान पौधे मरे नहीं।

फलदार पौधों को उगाने से होने वाले लाभ

1. फलदार पौधे उगाने से हमें दोहरा लाभ होगा। ये पौधे हमें छाया व शुद्ध हवा देने के साथ–साथ फल भी देंगे एवं वातावरण को शुद्ध करेंगे।
2. ढाणी या घर के पास उगाने से घर की सुन्दरता भी बढेगी।
3. फलदार पौधों से मिलने वाले फलों से हमारे भोजन के मुख्य अवयव (कम्पोनेंट) विटामिन्स एवं खनिज लवण की पूर्ति काफी हद तक हो सकेगी।
4. हमें घर पर ही ताजा फल मिल जाने से समय, श्रम एवं पैसों की बचत होगी।
5. हमारे भोजन में विटामिन एवं खनिज लवण मिलने से हमें कई प्रकार की बीमारियों से भी छुटकारा मिल जायेगा एवं हम स्वस्थ रहेंगे।
6. फलदार पेड़ों के बड़े होने पर हमें मिलने वाले फलों से अतिरिक्त आय भी होगी।
7. कलमी बेर के पत्तों एवं लसोडा के पत्तों से हमारे मवेशियों को अतिरिक्त चारा भी मिलेगा। इससे

भी हमारे धन (पैसो) की बचत होगी।

8. कलमी बेर के पौधों की हर वर्ष कटाई–छंटाई करनी आवश्यक होती है। इस प्रकार इन पौधों से मिलने वाली टहनियों से हमें जलाने के लिये अतिरिक्त ईंधन भी मिलेगा। इससे भी हमारे को आर्थिक मदद मिलेगी।

(1) उद्यानिकी ईकाई की स्थापना का ले–आउट

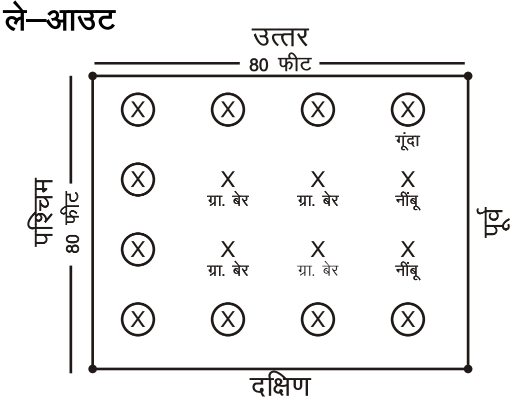

(2) फलदार पौधों की पी.ओ.सी. योजना के तहत मांग :–

(1) गूंदा–10 (2) ग्रा. बेर–4 (3) नींबू कागजी–2

(3) पौधे लगाने हेतु खड्डों का आकार :–

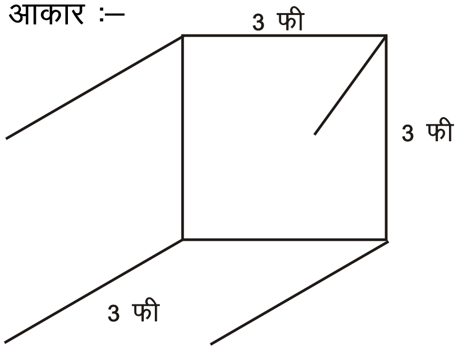

(4) खड्डा भरते वक्त आवश्यकता :–

(प) देशी सडा हुआ गोबर/मींगनी खाद 20 किलो (लाभार्थी द्वारा)

(पप) 250 ग्राम चूल्हे की राख

(पपप) दीमक नियंत्रण हेतु तम्बाकू का चूरा या नीम की खली

(ख) फलोद्यान इकाई के लिये माहवार की जाने वाली कृषि क्रियाओं का वार्षिक कार्यक्रम (Year Planner)

माह	कृषि क्रियाएं
जुलाई	दो अच्छी वर्षा होने पर से लेआउट के अनुसार फलदार पौधे लगाने हेतु 3' x 3' x 3' आकार के खड्डे खोदें व उनमें देशी खाद वर्मी कम्पोस्ट मिलाकर खड्डों को जमीन की सतह तक पूरा भरकर थामला बनाएं। जुलाई के अंत में या अगस्त के प्रथम सप्ताह में ले–आउट के अनुसार कागजी नींबू, ग्राफ्टेड बेर व गूंदा के पौधों को थामले में लगाएं व पानी पिलाएं।

सितम्बर	पौधे लगाये थामलों में एक–डेढ़ माह बाद निराई, गुडाई हेतु खुरपी लगाऐं। सप्ताह के अंतराल पर पौधों को पानी पिलाऐं।
अक्टूबर	जिन थामलों में पौधे लगाये हुए हैं उन थामलों में सर्दी की मौसम की सब्जियां पालक, धनियां, मेथी के बीज छांटे एवं प्याज, लहसून हेतु कंद व फूल गोभी, पता गोभी, बैंगन आदि के पौधे रोप लगाऐं। इससे आपको बिना अतिरिक्त पानी पिलाए घर बैठे ताजा सब्जियां खाने को मिलेगी। बेर में देशी बढवार कटा दें व प्लास्टिक का फीता खोद दें। ग्राफ्टेड बेर के एक वर्ष पुराने पौधों के ऊपर आये फूलों को झाड़ दें। दो वर्ष पुराने पौधों के ऊपर आये फूलों को कुछ को झाड़ दे व कुछ रहने दें। तीसरे वर्ष के पौधों पर प्रथम छिड़काव फलमक्खी के नियंत्रण हेतु करें।
नवंबर	पौधों में निराई–गुडाई से पानी पिलाऐं। नियमित अंतराल से पानी पिलाऐं। दीमक का प्रकोप पाये जाने पर तम्बाकू का घोल प्रति लीटर पानी के हिसाब से पानी पिलाने से पहले देवें। ग्राफ्टेड बेर के पौधों पर दूसरा छिड़काव तथा तीसरा छिड़काव माह के तीसरे सप्ताह में 15–20 दिन के अंतराल पर करें।
दिसंबर	सर्दी से बचाव हेतु ओला बनावें व नियमित पानी पिलाऐं। नींबू व गूंदें के तीन वर्ष पुराने पौधों में 8–10 इंच गहरी खुदाई करके 5–7 रोज के लिये खुला छोड़ दें व सिफारिश के अनुसार खाद मिलाकर कृल्की सिंचाई
जनवरी–फरवरी	पौधों का सर्दी से बचाव करें नियमित रूप से पानी पिलाऐं। जनवरी के प्रथम सप्ताह में तीन वर्ष पुराने गूंदे के पौधों के पत्ते तोड़ देवे ताकि जल्दी फूल आकर मार्च में होली पर फल मिल जायेंगे।
मार्च अप्रेल	जायदू की सब्जियों की बुवाई मार्च माह में थामलों में करें। ग्रा. बेर के पौधों को पानी पिलाना बंद कर दें। 3 वर्ष पुराने नींबू व गूंदे के पौधों को हल्का पानी पिलाऐं।
मई माह	ग्राफ्टेड बेर के पौधे जो 2 वर्ष से ज्यादा के हो गये हैं उनमे मई माह की 8–10 तारीख के पास कटाई छंटाई करें एवं कोई सहारे की आवश्यकता हो तो सहारा भी देवें। इसके बाद ग्रा. बेर के पौधों में इसी समय हर वर्ष नियमित रूप से कटाई छंटनी आवश्यक रूप से की जाती है। दीमक का प्रकोप का अंदेशा हो तो तम्बाकू का घोल /नीम का घोल साथ देवें। नींबू व गूंदे के पौधों में 5–7 रोज के अंतराल पर पानी अवश्य पिलावें ताकि गर्म लू से बचाव हो सके।
जून माह	उद्यानिकी ईकाई की स्थापना हेतु लाभार्थी का सही रूप से चयन करें। यदि पोधे लगाये जाने वाले स्थान की मिट्टी रेतीली ना होकर दोमट हैं तो ले–आउट देकर निर्धारित आकार (3' x 3' x 3') के खड्डे खुदवा कर खुला छोड़ दे ताकि गर्मी के कारण कई हानिकारक7कीट। बीमारियों का नियंत्रण हो सके। नींबू व गूंदे के पौधों को समय पर पानी पिलावें। तकनीकी तरीकों से उद्यानिकी इकाई की स्थापना करवाने हेतु तकनीकी प्रशिक्षण का आयोजन करवाऐं व प्रशिक्षण देंवे। नोट : कीट रोग नियंत्रण के लिये पौध–संरक्षण उपचार आवश्यकता अनुसार करें।

(ग) नींबू की खेती की उन्नत कृषि विधियां :

भारतवर्ष में उगाये जाने वाले विभिन्न फलों में नींबू प्रजाति के फलों का महत्वपूर्ण स्थान है। इन में विटामिनप–ए.बी., सी एवं खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। विटामिन सी सभी जातियों में अधिकता से पाई जाती है। नींबू वर्गीय फलों में मौसमी, मालटा, सन्तरा व नींबू आदि प्रमुख हैं।

जलवायु :

नींबू प्रजाति के फल विभिन्न प्रकार की जलवायु में पैदा किये जाते हैं। मौसम्बी व मालटा के उत्पादन के लिये गर्मी में अच्छी गर्मी व सर्दियों में अच्छी सर्दी एवं शुष्क जलवायु, जहां पर वर्षा 50–60 सेन्टीमीटर हो, उपयुक्त रहती है। श्रीगंगानगर एवं बीकानेर का इलाका इसके लिए अच्छा है। सन्तरा एवं नींबू के लिये गर्म, पाल रहित तथा नम जलवायु जहां वर्षा 100–150 सेन्टीमीटर होती है, उपयुक्त रहती है। कोटा, बून्दी, झालावाड़ व चित्तौड़गढ़ क्षेत्र भी इसकी खेती के लिये उपयुक्त है। नींबू सभी जिलों में उगाया जा सकता है।

भूमि :

नींबू प्रजाति के फलों की खेती कई प्रकार की भूमि में की जा सकती है, लेकिन अधिक उपजाऊ दोमट भूमि जो दो से सवा दो मीटर गहरी हो, इसकी खेती के लिये उपुयक्त है। जल निकास युक्त चिकनी मिट्टी में इसकी खेती आसानी से की जा सकती है। इन फलों की खेती के लिये भूमि का चुनाव करते समय इस बात का विशेष ध्यान देना चाहिए कि जमीन लवणीय या क्षारीय नहीं है।

प्रवर्धन :

नींबू प्रजाति के फलों का प्रर्वधन बीज तथा वानस्पतिक दोनों ही तरीकों द्वारा किया जाता है। बीज द्वारा पौधे तैयार करने के लिये उन्हें जुलाई, अगस्त या फरवरी में बोते हैं। नींबू में गूटी लगाने का उपयुक्त समय जुलाई का महीना है। मौसम्बी तथा मालटा के पौधों को कलिकाओं से तैयार किया जाता है। इसके लिये पहले बीज से मूलवृन्त तेयार करते हैं। बीज हमेशा रफलमेन (जमबेरी तथा जट्टी खट्टी) के स्वस्थ एवं पके फलों से लेना चाहिए। बीजों को फलों से निकालने के बाद उन्हें तुरन्त क्यारियों में बो देना चाहिए। बीज बोने हेतु फरवरी का समय उपयुक्त रहता है। क्यारियों में बीज से बीज की दूरी ढाई से तीन सेन्टीमीटर तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 8 से 10 सेन्टीमीटर रखनी चाहिए। जब पौधे करीब 10 से 15 सेन्टीमीटर के हो जाये तब दूसरी क्यारियों में लगाये और जब मूलवृन्त एक वर्ष का हो जाये तब उन पर ही कलिकायन (बडिग) करें। नींबू के बीज से तैयार पौधों की नर्सरी में बीज से तैयार पौधों को जिनकी आयु एक वर्ष से कम हो खेत में लगाने योगय नहीं होते हैं। नींबू के बीज पौधों को एक वर्ष पश्चात् ही खेत में लगावे।

किस्मे :

1. संतरा	:	नागपुर व किन्नो।
2. मालटा	:	हेमलिन, पाइनएपल, वाशिंगटन, नेवल, वेलन्सिया लेट, मालटा, ब्लडरेड व मोसम्मी एवं जाफा।
3. नींबू	:	कागजी, बारहमासी।

नींबू वर्ग :

कागजी नींबू–इनकी दो प्रचलित किस्मे कागजी गोल व कागजी लम्बा गोल (ओवल) है। इनके फल मध्यम गोल अकार के होते हैं। छिलका पतला 0.24 सेन्टीमीटर एवं रस की मात्रा 45 प्रतिशह होती है। इसमें घुलनशील लवण 7 प्रतिशत तथा अम्लता 3 से 5 प्रतिशत होती है। फल पकने का समय जुलाई–अगस्त और फरवरी–मार्च होता है। पेदावार 40 से 50 किलो प्रति पौधा होती है।

पौध लगाना :

नींबू वग्रीय पौधे 6ग6 मीटर की दूरी पर लगावे तथा 6 से 8 मीटर की दूरी पर मौसमी, संतरा आदि के लिये 90ग90ग90 सेन्टीमीटर आकार के गड्ढे दो माह पूर्व अर्थात् मई, जून के महिने में खोद लेना चाहिये। गड्ढों में 25 किलो गोबर की खाद तथा प्रति पौधा 50 ग्राम तम्बाकू, 250 ग्राम चूल्हें की राख मिलाकर पौधा लगा देंवे। पौधे लगाने का सबसे उपयुक्त समय जुलाई अगस्त रहता है। जहां पानी की अच्छी सुविधा हो वहां फरवरी में भी लगाया जा सकता है।

सिंचाई :

फूल खिलने से एक माह पूर्व सिंचाई बन्द कर देवे तथा फूल खिलते ही सिंचाई प्रारम्भ कर देनी चाहिये। गर्मियों में करीब 7 से 10 दिन के अन्तर पर व सर्दियों में 15 से 20 दिन क अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये।

अन्तराशस्य :

प्रारम्भ के तीन वर्षों तक बाग में कुष्माण्ड कुल की सब्जियों के अतिरिक्त सभी प्रकार की सब्जियों जैसे ग्वार, मटर, चौला, मिर्च, बैंगन आदि ली जा सकती है।

देखभाल :

पौधों को प्रारम्भिक अवस्था में ट्रेनिंग की आवश्यकता होती है। फल देने वाले पौधों को कम कटाई छंटाई की आवश्यकता होती है। फलों को तोड़ने के उपरान्त ऐसी शाखायें जमीन के अधिक सम्पर्क में आ

जाती है। उनको काट देते है। सभी रोगग्रस्त घनी एवं चढी शाखाओं को काट देवें।

प्रमुख कीट :

नींबू की तितली : इसकी लटें प्रारम्भ में चिड़ियों के बीट की तरह दिखाई देती है। अण्डों से निकलने के तुरन्त बाद यह पत्तियों को खाने लगती है तथा नुकसान पहुंचाती है। उपचार के लिए नीम के घोल का प्रयोग करें।

फल चूसक पंतगा : यह कीट फलों में सुराब करके रस चूसता है जिससे संक्रमित भाग पीला पड़ जाता है। फल की गुणवता कम हो जाती है।

नियन्त्रण हेतु रोशनी का प्रयोग कर पंतगो को इकटठा करके मार देवे।

लीफ माइनर, सिट्रस सिल्ला एवं रेड स्पाइडर माइट : लीफ माइनर की लटें बहुत छोटी होती है तथा यह पत्तियां सिकुड़ जाती है। इस कीट का प्रकोप वर्षा एवं बसन्त ऋतु में ज्यादा होता है।

रेड स्पाइडर माइट पत्तियों के ऊपरी सिरों से रस चूसती हैं। कभी कभी बहुत ही नुकसान पहुँचाती है।

मूल ग्रन्थी (सूत्र कृमि) : इसका प्रकोप नींबू की जड़ों पर होता है। इसके प्रकोप से पत्तियां पीली पड़ जाती है तथा टहनियां सूखने लगती है। जड़ गुच्छेदार बन जाती है। पेड़ पर फल छोटे व कम लगते है तथा जल्दी गिर जाते हैं।

प्रमुख व्याधियां :

नींबू का केंकर : जीवाणु से होने वाले इस रोग से पत्तियां, टहनियां व फलों पर भूरे रंग के मध्य से फटे खुरदरे व कार्कनुमा धब्बे स्पष्ट दिखाई देते हैं। रोगी पत्तियां गिर जाती है। टहनियों एवं शाखाओं पर लम्बे घाव बनते है। जिससे टहनियां टूट जाती है। इस रोग से कागजी नींबू को अधिक हानि होती है।

नियंत्रण हेतु रोगग्रस्त पत्तियों और टहनियों को नष्ट करें। रोपण हेतु नये बगीचे में सदा रोग रहित नर्सरी के पौधे ही उपयोग में लायें ।

रोग के प्रकोप को रोकने के लिए कटाई छंटाई के बाद विशेषकर जून से अक्टूबर तक नीम व तम्बाकू के घोल पानी के घोल का बीस दिन के अन्तर पर फरवरी और मार्च के महीने में छिड़काव करें या लहसून पानी के घोल का रोग के दिखाई देते ही बीस दिन के अन्तर पर छिड़काव करें।

गोदाति रोग (गमोसिस) : इस रोग के कारण तनों पर भूमि के पास से और टहनियों के रोग ग्रस्त भाग से गोंद जैसा पदार्थ निकल कर छाल पर बूंदों के रूप में इकट्ठा हो जाता है जिसकी वजह से छाल सूख कर फट जाती है और भीतरी भाग भूरे रंग का हो जाता है। रोग के प्रकोप से अंत में पेड़ मरने की स्थिति में पहुंच जाता है।

नियंत्रण के लिये रोगग्रस्त छाल को अच्छी प्रकार हटा कर नीम केक घोल घोल का चार पांच छिड़काव 15 दिन के अन्दर पर कीजिये। इसके अतिरिक्त बचाव के लिये अति आवश्यक है।

विंदर टिप या डाई बैक : इस रोग से पत्तियों पर भूरे बैंगनी धब्बे बन जाते हैं। टहनियां ऊपर से नीचे की ओर सूखती हुई भूरी हो जाती है और पत्तियां सूख कर गिर जाती है।

नियंत्रण हेतु रोगी भाग की छंटाइ के बाद नीम /लहसून के घोल का छिड़काव वर्षा ऋतु में 15 दिन व सर्दियों में 20 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए। इसके अतिरिक्त वर्ष में दो बार (फरवरी और अप्रेल) में सूक्ष्म तत्वों का छिड़काव करें।

तुड़ाई एवं उपज :

सन्तरा, मालटा व नींबू का रंग जब हल्का पीला हो जावे तब इन्हें तोड़ लेना चाहिए।

मौसमी, सन्तरा, और मालटा की उपज प्रति पौधा 70 से 80 किलो होती है। कागजी नींबू में 40 से 50 किलो प्रति पौधा होती है।

(घ) गूंदा की खेती की उन्नत कृषि विधियां :

गूंदा या लसोडा– गूंदा या लसोड़ा कम पानी में उगने वाला वृक्ष है। इसे खेत के चारों ओर बाड़ के साथ साथ भी लगाया जाता है। क्योंकि यह गर्म लू से फसल की रक्षा करता है।

पौधे तैयार करना – लसोड़ा की वैसे कोई विशेष उन्नत किस्म नहीं है अतः किसी अच्छे बड़े फल वाले पेड़ के पके हुए फल लेकर गुठलियां पौधशाला में बोई जाती है। गुठली के उगने में 20 से 25 दिन का समय लगता है। बुआई मई से जुलाई तक की जा सकती है। अगस्त तक पौधे खेत में में लगाने हो जाते है। जुलाई माह में इसकी कलम भी लगाई जा सकती है। कलम 3–4 माह में तैयार हो जाती है। किसी भी साधारण पुराने गूंदे के पेड़ को ऊपर से काटकर नई शाखाओं पर बड़े गूंदे की आंख वर्षा ऋतु में चढ़ाई जा सकती है।

लगाने की विधि – यदि खेत के चारों ओर बाड़ पर पौधे लगाने हो तो पहली कतार में बाड़ के साथ 20 फीट के अनुसार 2 x 2 x 2 फीट के खड्डे खोदे। दूसरी कतार पहली कतार से 20 फीट दूर तथा गड्ढे पहली कतार के दो गड्ढों के बीच खोदने चाहिए ताकि हवा को रोकने में मदद मिले।

यदि खेत में बगीचा लगाना हो तो 20 फीट के अन्तर पर कतार व पौधों की दरी के गड्ढों में 2 टोकरी गोबर की खाद 50 ग्राम एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत पाउडर मिलकर मिट्टी व खाद के मिश्रण से भरें। वर्षा ऋतु में पौधे लगाएं व पहली साल आवश्यकता हो तो पानी दें। पौधे की अच्छी बढ़वार के लिए प्रति वर्ष 3–4 टोकरी मींगणी या सडे हुए गोबर की खाद व 200 ग्राम तम्बाकू प्रति गड्ढा के हिसाब से दे दें। पौधे की उम्र के साथ थाला भी बड़ा करते जाएं।

जल्दी फल तेयार करने की विधि – गूंदे के डेढ़–दो वर्ष के पेड़ से भी फल प्राप्त किए जा सकते हैं। जनवरी के मध्य में सारे पत्ते तुड़वा दें जिससे फूल शीघ्र आएंगे तथा फल निर्धारित समय से पूर्व प्राप्त होंगे जब वे बाजार में बहुत महंगे होते हैं।

एक पेड़ से 3 वर्ष के बाद 20–35 किलोग्राम तक फल प्राप्त हो सकते हैं। लगातार अच्छी देखरेख से फल उत्पादन बढ़कर 8 वर्ष बाद 1–2 क्विंटल प्रति पेड़ सम्भव है साधारण रूप से गूंदे के कच्चे फल बाजार में लगभग औसतन 60 रुपये प्रति किलोग्राम के भाव पर बिकते हैं।

उपयोग – गूंदा के पके हुए फल का गूदा चिकना और मीठा होता है। बच्चे इस फल को बड़े चाव से खाते हैं। इनका कच्चा फल सब्जी व आचार बनाने के लिए बहुत उपयोगी रहता है। अनार के फलों को चिड़ियां आदि से बचाने के लिए गूंदे के पत्ते लपेटे जा सकते हैं।

(ड़) बेर की खेती की उन्नत कृषि विधियां

बेर एक प्रसिद्ध फल है जिसकी खेती राजस्थान में बहुत ही आसानी से की जा सकती हैं। इसके फलों का प्रयोग ताजें फलों के रूप में खाने, सुखाकर छुआरों के रूप में,शर्बत, जैम, मुरब्बा, केण्डी, चटनी एवं अचार बनाकर किया जाता है। इसके अतिरिक्त बेर के पौधे का लाख के कीड़ों को पालने में और इसके पत्तों का प्रयोग पशुओं के चारे के रूप में किया जाता है। इसकी लकड़ी जलाने के उपयोग में भी ली जाती है।

जलवायु एवं भूमि

यह विभिन्न प्रकार की जलवायु तथा भूमि में असानी से उगाया जा सकता है। मूसला जड़ होने के कारण अन्य फलों की तुलना में इसको बहुत ही कम पानी की आवश्यकता होती है। फल देने के बाद इसके पौधे गर्मियों में सुषुप्तावस्था में चले जाते है और पत्तें झड़ जाते है। इसलिए पौधे अधिक गर्मी और प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता रखते है।

बेर सम्पूर्ण राजस्थान में उगाया जाता है। गोला, सेव, मूण्डिया पश्चिमी राजस्थान, उमरान अलवर, भरतपुर, गंगानगर गोला महारवाली व कैथली जयपुर हेतु उपयुक्त है। इसकी खेती क्षारीय तथा लवणीय भूमि में भी कर सकते हैं किन्तु बलुई दोमट भूमि जिसमें जीवांश की मात्रा अधिक हो इसकी खेती के लिए उपयुक्त रहती है।

उन्नत किस्में

उन्नत किस्में	किस्म	फल पकने का समय
अगेती	गेला	जनवरी का प्रथम सप्ताह
मध्यम	सेव मूण्डिया	जनवरी का अंतिम सप्ताह
पछैती	उमरान	फरवरी अंतिम सप्ताह से मार्च प्रथम सप्ताह

प्रवर्धन

इसके मूल वृन्त बीज द्वारा नर्सरी में ही तैयार किये जाते है। 25 X15 सेंटीमीटर की पौलीथिन की थैलियों में 1:1:1 के अनुपात में, चिकनी मिट्टी, बलुई मिट्टी और गोबर की खाद का मिश्रण भर देते है। इसके बाद देशी बेर से निकाले गये बीजों की बुवाई इन तैयार थैलियों में मार्च के प्रथम या द्वितीय सप्ताह में कर देते है। एवं फिर पानी दे देते है। बुवाई से पूर्व बीजों को केप्टॉन 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार कर बोना चाहिए। 7 से 10 में बीजों का अंकुरण हो जाता है व लगभग 3 से 4 महीने में देशी पौधे कलिकायन (बडिग) के योग्य हो जाते है।

फूल आने से पूर्व जून से अगस्त में उन्नत किस्मों के पौधों से अच्छी कलिकाओं को चुनकर इन तैयार किये गये मूल वृन्तों पर वर्म कलिकाओं (टी बडिग) अथवा आई बडिग की विधी द्वारा लगा देते है। इस प्रकार 30 से 40 दिन बाद पौधा खेत में स्थानान्तकरण के योग्य हो जाता है।

रोपाई

मई जून माह में 1x1x1 मीटर आकार के गड्ढे 6 से 8 मीटर की दूरी पर खोद लेते है। फिर इन गड्ढों को खुला छोड़ देते हैं बाद में इनमें निम्नलिखित खाद व उर्वरक प्रति गड्ढा देते हैं।

अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद	20 से 25 किलो
तम्बाकू का चूरा	250 ग्राम /थैली
वर्मी कम्पोस्ट	1 किलो प्रति पौधा

खाद, उर्वरक एवं दवा को खोदी हुई मिट्टी के साथ अच्छी तरह मिला देते हैं और फिर इस मिट्टी को गड्ढे में भर देते है। कलिकायित पौधों को थावलों के बीच लगाने के बाद रोपाई कर देते है। इसकी रोपाई का उपयुक्त समय वर्षा ऋतु है।

अन्तर शरय

आरम्भ के तीन वर्षो तक बाग में कु माण्ड कुल की सब्जियों के अरिरिक्त सभी प्रकार की सब्जियां जैसे मटर, ग्वार, चोला, मिर्च, बैंगन आदि ली जा सकती है।

कटाई – छंटाई

प्रारम्भिक दो या तीन साल तक पौधे को सशक्त रूप और सही आकार देने के लिये, पौधे के मुख्य तने पर 4 से 5 प्राथमिक शाखाएं हर दिशा में रहने देते है। पहली शाखा के जमीन की सतह से आधा या एक फुट तक आने देते हैं और प्रत्येक शाखा के बीच में करीब आधा से एक फुट की दूरी रखते है। बेर में प्रति वर्ष कृन्तन करना चाहिए, क्योंकि इसकी पत्तियों के कक्ष से जो नये प्रोह निकलते हैं उन्हीं पर फूल एवं फल लगते हैं। मई में गर्मी प्रारम्भ होने पर पौधे सुषुप्तावस्था में प्रवेश कर जाते हैं तब इनकी कटाई छंटाई कर देनी चाहिए जिससे ज्यादा से ज्यादा नये प्ररोह निकले और उन पर अधिक फल लगे। कृन्तन द्वितीय शाखा तक करें। कृन्तन करते समय अनचाही रोगग्रस्त सूखी टहनियों और आपस में रगड़ खाती हुई टहनियों को हटा देना चाहिए। बेर में 20 कलिका रख कर गत वर्ष की द्वितीयक शाखाओं को काटें।

सिंचाई

बेर के पौधों में कम पानी की आवश्यकता होती है। साधारण तौर पर नये प्ररोहों के निकलते समय, फूल आते समय और उनकी वृद्विके समय पर्याप्त मात्रा में सिंचाई देनी चाहिए।

प्रमुख कीट: फल मक्खी

यह बेर का सबसे हानिकारक कीट है। जब फल छोटे व हरे रहते हैं तब कीट का आक्रमण शुरू होता है। शुरू में फल में एक लट (मेगट) पाई जाती है। छोटे फल इसके प्रभाव से काणे हो जाते हैं लेकिन बड़े फलों के आकार में कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता है। इसके आक्रमण से बीज के चारों ओर एक खाली स्थान हो जाता है

तथा लटें अन्दर से पूरा फल खाने के बाद बाहर आ जाती है। इसके बाद यह मिट्टी में प्यूपा के रूप में छिपा रहता है। कुद दिन बाद इसमें मक्खियां बनकर तैयार हो जाती है तथा इनका आक्रमण फलों पर पुनः शुरू हो जाता है।

नियंत्रण हेतु बाग के आसपास के क्षेत्र से बेर की जंगली झाड़ियों को हटा देवें। प्रभावित फलों को इकट्ठा करके नष्ट कर देंवे। मई जून में बाग की मिट्टी को पलटते रहे।

बेर के पौधों में जिस समय अधिकांश फल मटर के आकार के बनने लगे उस समय तम्बाकू का घोल या नीम का घोल का छिड़काव करें।

चेफर बीटल

यह एक हानिकारक कीट है। इसका प्रकोप जून जुलाई में अधिक होता हैं। यह पेड़ो की नई पत्तियों एवं प्ररोहों को खाता है। वर्षा शुरू होते ही इसका आक्रमण शुरू हो जाता है।

नियंत्रण हेतु जून माह में पहली व ा के तुरन्त बाद नीम केक घोल या खट्टी छाछ का हिसाब से पेड़ो पर ठीक तरह से छिड़काव करें।

छाल भक्षक कीट

यह कीट पेड़ की छाल को खाता है तथा छिपने के लिये अन्दर डाली में गहराई तक सुरंग बना लेता है जिससे कभी – कभी डाल/शाखा कमजोर हो जाती है।

नियंत्रण हेतु सुखी शाखाओं को काट कर जला देवें ।

गौमूत्र और नीम केके 250 ग्राम प्रति पौधे के हिसाब से लेकर घोल बनाकर शाखाओं तथा डालियों पर छिड़के, साथ ही सुरंग को साफ करके पिचकारी की सहायता से केरोसिन 3 से 5 मिललीटर प्रति सुरंग डालें या उसका फाहा बनाकर सुरंग के अन्दर रख देवें और बाहर से गीली मिट्टी से बंद करें।

प्रमुख व्याधियां

छाछया (पाउडरी मिल्ड्यू या चुर्णी फफूंद): इस रोग का प्रकोप जाड़े में दिखाई पड़ता है। इससे बेर की टहनियां, पत्तिया एवं फल सफेद कवक आवरण से ढक जाते है। प्रभावित पत्तियों एवं फलों की वृद्धि रूक जाती है और फल कगर जाते हैं।

नीम के घोल के तीन छिड़काव करें, प्रथम फूल आने से पहले और दो बाद में 15 – 15 दिन के अन्तराल पर करने चाहिए।

पत्ती धब्बा / झुलसा रोगः इस रोग के लक्षण नवम्बर माह में दिखाई देने लगते हैं। यह रोग एक प्रकार की फफूंद आल्टरनेरिया द्वारा फैलता हैं। रोग ग्रसित पत्तियों पर छोटे छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते है तथा बाद में यह धब्बे भूरे रंग के तथा आकार में बढ़कर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। पत्तियां सूखकर गिरने लग जाती है।

नियंत्रण हेतु रोग दिखाई देते ही गौ – मूत्र का घोल 30 ग्राम लेकर 5 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें।

फल आना तथा फल बनना

बेर में ही साल फूल नये प्ररोहों पर आते है। उत्तरी भारत में बेर जनवरी से मार्च तक मिलते हैं। बेर का पेड़ चार साल बाद पर्याप्त मात्रा में फल देने लगता है।

उपज

बेर की उपज औसतन 60 से 80 किलोग्राम प्रति पौधा होती है।

(च) कीट रोगों से पौधों के बचाव के लिए घरेलू उपचार

थार मरुस्थल में सैंकडों वर्षों से गूंदा, बेर आदि की प्राकृतिक खेती की जा रही है। इन सभी उत्पादों के जैविक होने का प्रचार व प्रमाणीकरण की आवश्यकता है। कुल मिलाकर जैविक खेती स्थानीय संसाधनों का उपयोग खेती में कर कम लागत, ज्यादा गुणवत्ता वाली उपज लेने का तरीका है। इसमें उपभोक्ता की जागरूकता और वातावरण को सुरक्षित रखने में सहायक है। इसके लिए हमारे घरों में ही आम मिलने वाली वस्तुओं के प्रयोग से भी ये की जा सकती है।

निम्बोली का घोल बनाने की प्रक्रिया :

1. एक लीटर घोल तैयार करने के लिए 50 ग्राम नीम की गुठली का प्रयोग करे।
2. गुठली को धीरे से कुटें ताकि उससे कोई तेल बाहर नहीं आये।
3. कुटें हुए बीजों को एक मलमल के कपड़े में डालकर पानी में रातभर के लिए एक लीटर पानी में भिगाये।
4. इस थैली को निचोढ़ दे और रस को छान लें।
5. इस सत्त में ए मीली लीटर खादी साबुन के घोल में डाले। इससे यह घोल पत्तियों से अच्छी तरह चिपक जायेगा।
6. यह घोल सफेद रंग का होना चाहिए।

नीम की पत्ति का घोल :

1. पाँच लीटर घोल बनाने के लिए एक किलो पत्ति का उपयोग करें।
2. पत्तियों को रातभर पानी में भिगायें।
3. पत्तियों को पीसकर घोल को छान लें।
4. इस सत्त में ए मीली लीटर खादी साबुन के घोल में डाले। इससे यह घोल पत्तियों से अच्छी तरह चिपक जायेगा।
5. यह मिश्रित घोल पत्ते खाने वाले किटों से बचाव करेगा।

इस सत्त को उबालने की आवश्यकता नहीं हैं। इससे घट जाता है।

नीम तेल का घोल :

नीम का तेल निम्बोली से निकाला जाता है। एक लीटर घोल बनाने के लिए हमें निम्नलिखित सामान की आवश्यकता है:

एक लीटर पानी में 30 मीली लीटर नीम का तेल डाले तथा उसे अच्छी तरह मिलाये। अब इस घोल में एक लीटर खादी साबुन डाले तथा अच्छी तरह मिलाये। इस घोल को बनाने के बाद तुरन्त प्रयोग में ले अन्यथा संग्रहित करने पर यह घोल में तेल अलग होकर ऊपर तैरने लगेगा। संग्रहित करने पर इसका प्रभावोत्पादकता घट जायेगी।

नीम केक का घोल :

1. बीज से तेल निकालने के बाद बीज के अवशे ा को खली कहते है।
2. एक लीटर घोल बनाने के लिए 100 ग्राम नीम की खली का प्रयोग करें
3. नीम की खली को मलमल के कपड़े में बांध दे तथा एक लीटर पानी में उसे रातभर भिगा दें।
4. अगले दिन उस घोल को छान लें।
5. अब इसमें एक मीली लीटर खादी साबुन में डाले तथा अच्छी तरह मिला ले। अब घोल

छिड़काव के लिए तैयार है। इस घोल को सूर्यास्त के पश्चात ही छिड़काव करें अन्यथा नीम में मौजूद सक्रिय सामग्री अल्ट्रा वायलेट विकिरण से टूटकर स्प्रे की प्रभावकारिता को प्रभावित करती है।

लहसून का घोल :

1. 100 ग्राम बारिक पीसा हुआ लहसून प्रयोग करें।
2. बरिक पीसा लहसून 2 बड़े चम्मच तरल पैराफिन में 48 घंटे तक भिगोकर रख दें।
3. अब 30 ग्राम खादी साबुन आधे लीटर पानी में अच्छी तरह मिलाये।
4. घोल को छानने तथा प्लास्टिक के डिब्बे में रख लें।
5. एक लीटर स्प्रे बनाने के लिए 15 मी.ली. सत्त डाले तथा अच्छी तरह से मिलाले।

तम्बाकू का घोल :

1. 250 ग्राम तम्बाकू लेंवे और 4 लीटर पानी में आधे घंटे के लिए उबालें।
2. घोल में 30 ग्राम खादी साबुन अच्छे प्रकार से मिलाए।
3. अब मिश्रित घोल का 1/4 हिस्से को 4 लीटर पानी में घोलकर स्प्रे करें।

गौ-मूत्र का घोल :

4 लीटर गौमूत्र व 450 किलाग्राम नीम की पत्तियाँ ताँबे के बरतन में 15 दिन गलने दें, फिर उबाले व 50 प्रतिशत रहने पर ठण्डा करें व 6 लीटर की पानी मिलाकर छिड़काव करें। सभी प्रकार के कीट मर जायेंगे।

(छ) दीमक के उपचार के लिए घरेलू उपचार

चीनी और दाल :

चीनी और दाल को कुटकर मिट्टी में मिला देवे। इस प्रकार मिट्टी में चिट्टीयाँ आ जायेंगी और दीमक नुकसान नहीं पहुँचा सकेगी।

चिकनाई युक्त पानी :

घर में बर्तन साफ करते समय, बर्त्तनों पर लगे खाने की चिकनाई युक्त पानी को किसी एक बर्तन में एकत्रित कर लेवे और उसे पौधे में डाल दें, ऐसा करने से दीमक नहीं आएगी।

चुल्हे की राख :

चुल्हे की राख 500 ग्राम पौधों में लगाने से पूर्व जरूर एक परत के रूप में बिछा दें और मिट्टी डालकर उसे अच्छे प्रकार से मिला दें। इससे भी दीमक दूर भाग जाएगी।

आक की सूखी पत्तियाँ :

आक ही हरी पत्तियों को छांव में सूखा लेवे। अच्छे प्रकार से सूखाने के बाद, इसे पौधे की मिट्टी में मिला दें। इस प्रकार भी दीमक नुकसान नहीं करेगी।

खट्टी छाछ :

150 मिली. छाछ के तीन दिन तक सड़ाकर उसे 4 लीटर पानी में घोलकर पौधे को पिला देंवे। इस प्रकार दीमक नुकसान नहीं पहुँचा पायेगी।

(ज) वर्मी कम्पोस्ट

रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करते रहने से भूमि में पौषक तत्वों के बीच असंतुलन हो गया है तथा अनेक पौषक तत्वों की कमी हो गयी है। इसको दूर करने हेतु रसायनिक उर्वरकों के साथ–साथ जैविक खाद का प्रयोग ही एक मात्र विकल्प है जिससे पौधों को सभी आवश्यक पोषक तत्व मिले तथा अधिक उपज प्राप्त हो। जैविक खाद में से एक वर्मीकम्पोस्ट है जिसके द्वारा किसान भाई बेकार वानस्पतिक पदार्थो को 2 माह की अल्पावधि में मूल्यवान जैविक खाद वर्मीकम्पोस्ट में बदल सकते हैं एवं प्रयोग कर अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

कैचुओ की कास्टिंग, उनके अवशेष/मल एवं उनके अण्डे, कोकून, लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु, पोषक तत्व और अपचित जैविक पदार्थो का मिश्रण, वर्मीकम्पोस्ट कहलाता है। उपयुक्त तापमान, नमी हवा एवं जैविक पदार्थो को मिलने पर केचुए अपनी संख्या बढ़ाने के साथ–साथ गोबर एवं वनस्पति अवशेष आदि को सड़ाकर जैविक खाद के रूप में परिवर्तित करते है। केचुओं का वैज्ञानिक तरीकों से प्रजनन तथा बड़े करना वर्मीकल्चर कहलाता है। वर्मीकल्चर का उद्देश्य केचुओं की जल्दी, कम समय एवं कम जगह में बढ़ोत्तरी कर भूमि की दशा में सुधार किया जा सके। वर्मीकम्पोस्ट में नत्रजन, फास्फेट एवं पोटाश के अतिरिक्त आवश्यक पौषक तत्व जैसे जिंक, कॉपर, कैल्शियम, मेगनीशियम, सल्फर, कोबाल्ट, बोरोन भी पाये जाते हैं।

वर्मीकम्पोस्ट के लाभ :

- वर्मीकम्पोस्ट में सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता अधिक रहती है जो भूमि में रहने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं के लिये लाभदायक है। यह भूमि में मौजूद सूक्ष्म जीवाणुओं को सक्रिय बनाता है।
- कार्बनिक पदार्थ का स्त्रोत होते है वर्मीकम्पोस्ट मृदा संरचना, वायु संचार तथा जलधारण क्षमता में सुधार लाता है व मृदा में ह्युमस की मात्रा को बढ़ाता है। रासायनिक क्रियाओं के कारण पौषक तत्व पौधों को मिलने की अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं। उनकी उपलब्धता बढ़ती है एवं भू उर्वरा शक्ति में बढोतरी होती है।
- वर्मीकम्पोस्ट से पौधों को संतुलित मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं।

✦ भूमिगत जल की मात्रा में बढ़ोतरी होती है तथा भूमि संधारण होता है। सिंचाई के पानी की मात्रा एवं संख्या में कमी आती है।

वर्मीकम्पोस्ट के लिये केचुएं :

केचुएं जीवांश पदार्थो को 60 दिन में वर्मीकम्पोस्ट के रूप में तैयार कर देते हैं। ये जीवांश पदार्थो को मिलाते रहते है, उसमें वायु संचर करते है एवं पोषक तत्वों को संरक्षित करने के साथ–साथ जीवांश पदार्थ को सड़ाने की क्रिया को बढ़ाते हैं। पौधों के अवशेषों से वर्मीकम्पोस्ट जल्दी तैयार होता है।

केचुएं के शरीर का अन्तिम सिरे का पूरा भाग नकीला होता है। ये आसानी से बिल बना सकते हैं। वयस्क केचुएं गहरे भूरे प्रभावी होते हैं। इनमें देखने की शक्ति नहीं होती है लेकिन इनमें प्रकाश के प्रति संवेदन शक्ति होती है जिससे ये दिन और रात का अन्तर कर सकते हैं। इनमें सुनने की शक्ति भी नहीं होती है लेकिन ये सम्पर्क के प्रति संवेदनशील होते हैं।

केचुएं के भोज्य पदार्थो में भूमि में मौजूद ताजा तथा सड़ रही पत्तियां, जीवित या मृत लटें तथा जानवर एवं भूमि में मिले हुए बेक्टिरिया होते है। भोजन प्राप्त करने के लिये ये बड़ी मात्रा में मिट्टी को निगलते हैं। इसके द्वारा निगली हुई मिट्टी एवं जीवांश पदार्थ इसके शरीर में पाचन के दौरान अच्छी तरह पिसकर मिल जाते हैं तथा शरीर से बाहर निकाल दिये जाते हैं। इससे भूमि की दशा सुधरती है। उर्वराशक्ति में बढ़ोतरी होती है।

विपरीत स्थितियों में जिन्दा रहने के लिये केचुएं कोकून अवस्था में रहते हैं क्योंकि कोकून सड़ने की प्रक्रिया एवं तापमान की अधिकता को सहन कर सकते हैं। परिस्थितियां अनुकूल होने पर ही कोकून से केचुएं के रूप में परिवर्तित होते हैं। विपरीत स्थितियों से बचने के लिये ये भूमि की निचली सतहों में चले जाते हैं जहां उचित तापमान एवं नमी/आर्द्रता उपलब्ध होती है। अक्रियाशील अवस्था में ये खाना बन्द कर देते हैं तथा कुण्डली बनाकर पड़े रहते हैं। इनके शरीर में लगी हुई श्लेष्मा की परत इसको सड़ने एवं तापमान की अधिकता से बचाती है। ये लगातार बढ़ते रहते हैं।

इनके शरीर के वजन में 85 प्रतिशत भाग तक पानी होता है। पानी का आदान प्रदान इनके शरीर की दीवार द्वारा होता है।

केचुएं का लम्बा सिलेण्डरनुमा शरीर होने से यह भूमि के कणों के बीच आसानी से चल फिर सकता है। यह मिट्टी खाता जाता है तथा आगे बढ़ता रहता है जिससे बिल बनता जाता है। बिल में इसके पाचन तंत्र द्वारा निकाले गये अवशिष्ट पदार्थ होते हैं।

ये बिल में आगे व पीछे दोनों तरफ रेंग सकते हैं जिससे वायु संचार होता है तथा भूमि अधिक पानी अवशोषित करती है।

इनके द्वारा निगली हुई मिट्टी इनके पाचन तंत्र से बारीक पिसी हुई अवस्था में निकलती है। इनके द्वारा निकाले हुए जीवांश पदार्थो एवं मिट्टी के कणों को वर्मीकम्पोस्ट के रूप में जाना जाता है।

आक्सीजन लेने तथा वर्मकास्ट कनलाने हेतु केचुएं भूमि की सतह पर आते हैं तथा नये स्थान से भूमि में घुसते हैं। ये मानसून के 3–4 माह सक्रिय रहते है। केचुओं के शरीर से निकली वर्मीकास्ट में ज्यादा सूक्ष्म जीवाणु एवं एनजाइम्स होते हैं जो जीवांश पदार्थ को अधिक विखंडित करते हैं।

केचुएं के बिल बनाने से भूमि में हवा व नमी का प्रवेश बढ़ाता है। मिट्टी भूरीभूरी हो जाती है जिससे पौधों की जड़े गहराई तक जाती है। इनके शरीर से निकले पदार्थो से नत्रजन की मात्रा में वृद्धि होती है। लम्बे समय तक इनकी क्रियाशीलता के लिये भूमि की सतह पर घासफूस की परत होनी चाहिये क्योंकि ये अंधेरे में रहना पसंद करते है एवं अंधेरे में इनकी प्रजनन दर बढ़ जाती है।

केचुओं की दो प्रजातियां होती है, इण्डोगीज एवं ई पी गीज।

गहरी सुरंग बनाने वाले लम्बे केचुएं इण्डोगीज कहलाते है इनकी लम्बाई 8–10 इंच एवं वजन लगभग 5 ग्राम होता है। ये नमी की तलाश में 8–10 इंच गहराई तक जमीन में चले जाते हैं। मृदा को 90 प्रतिशत तक कार्बनिक पदार्थो को कम 10 प्रतिशत खाते हैं एवं वर्षा ऋतु में दिखाई देते है। ये बहुत अधिक एवं स्थाई सुरंगे बनाते है तथा सुरंगों में अपना मल निकालते रहते है। ये सतह से अपना भोज्य पदार्थ लाकर खाने हेतु इकट्ठा करते है। ये भूमि को भुरभूरी बनाने एवं उसमें जीवांश पदार्थ मिलने हेतु उपयोगी होते हैं।

सतही केचुएं : ये छोटे आकार के भूमि की सतह पर रहने वाले ई पी गीज कहलाते है। इनकी क्रियाशीलता एवं जीवन अवधि कम लेकिन प्रजनन दर अधिक होती है। ये कार्बनिक पदार्थो को 90 प्रतिशत तथा मृदा को कम 0 प्रतिशत खाते है तथा वजन में आधा से एक ग्राम के बीच होते है और वर्मीकम्पोस्ट बनाने में ज्यादा प्रभावी व उपयोगी रहते है। यह जैव अपघटित पदार्थो को अधिक तेजी से भक्षण करते है तथा वर्मीकम्पोस्ट और ह्यूमस भी बनाते है। यह अपने रहने के ढेर से अलग नहीं जाते है। 25–35 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान और मृदा में 30–40 प्रतिशत नमी इनकी क्रियाशीलता के लिये उपयुक्त रहती है। इनकी मोटाई 2–3 मीलीमीटर, लम्बाई 4–6 इंच तथा इनका रंग लाल रहता है।

केचुओं में प्रजननः उपयुक्त तापमान, नमी, खाद्य पदार्थ होने पर केचुएं प्रायः 4 सप्ताह में वयस्क होकर प्रजनन करने के लायक बन जाते है। वयस्क केचुआ एक सप्ताह में 2–3 कोकून देने लगता है एवं एक कोकून में 3–4 अण्डे होते है। इस प्रकार एक प्रजनक केचुएं से प्रथम 6 माह में ही लगभग 250 केचुएं पैदा कर दिये जाते है। जब इनका घनत्व बढ़ जाता है तो जगह की कमी के कारण इनकी प्रजनन गति धीमी हो जाती है तथा उचित प्रजनन दर बनाये रखने के लिये इन केचुओं को दूसरी जगह बदलना पड़ता है।

वर्मीकम्पोस्ट तैयार करना :

- वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिये सबसे पहले 6–8 फुट की ऊचाई का एक छप्पर तैयार करे ताकि उपयुक्त तापमान एवं छाया रखी जा सके। वर्मीकम्पोस्ट हेतु 25–30 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त होता है। वर्मीकम्पोस्ट बनाने की क्यारी का आकार लम्बाई में 40–50 फीट और चौड़ाई 3 फीट रखा जाना चाहिये।
- वर्मीकम्पोस्ट के लिए क्यारी में मक्का, ज्वार, बाजारा, जूट, गन्ने के अवशेष आदि को 3 इंच की मोटाई में तह लगाकर बिछाये। इस तह पर अब 2 इंच की मोटाई तक सूखा हुआ कम्पोस्ट या गोबर की खाद बिछाकर पानी डालकर गीला किया जाता है। इस गीली तह पर 1 इंच मोटी वर्मीकम्पोस्ट की परत जिसमें केचुएं भी मिले होते है डाली जाती है। इस तीसरी परत पर 3–4 दिन पुराना गोबर का खाद या गोबर के साथ घास फूस, पत्तियां मिले हुए टुकड़ों का कचरा 2 इंच मोटाई में बिछा दिया जाता है। अन्त में इस परत पर 10–12 इंच मोटाई में गोबर के साथ घास फूस, पत्तियों के मिले हुए टुकड़ों का कचरा बिछा दिया जाता है ताकि सबसे निचली सतह से उपर की सतह तक की उंचाई लगभग डेढ़ फुट हो जाए। नमी बनाये रखने के लिये हर परत पर पानी को छिड़का जाता है। अब इनको बोरी के टाटा से अच्छी तरह से ढककर 30 प्रतिशत तक नमी बनाये रखने के लिये पानी छिड़का जाता है।
- 2 माह के अन्दर ही गोबर एवं गोबर मिश्रित घास फूस पत्तियां, वानस्पतिक अवशेष एवं कचरा आदि वर्मीकम्पोस्ट में बदल जाते हैं। केचुएं कार्बनिक पदार्थो को खाना जारी रखते है तथा अपनी कास्टिंग भी ढेर के ढेर के ऊपर छोड़ते जाते हैं।
- ढेर का रंग काला होना और केचुओं का ऊपरी सतह पर आना वर्मीकम्पोस्ट तैयार होने का सूचक है। 40ग30ग1 फीट के ढेर से 2 माह में एक टन वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त होता है।

- वर्मीकम्पोस्ट से केचुएं अलग करने के लिये 3–4 फुट ऊंचा वर्मीकास्ट का ढेर बनाये तथा पानी छिड़कना बंद कर देवे। ज्यों ज्यों ढेर शुष्क होता जायेगा केचुएं नमी की तरफ नीच अंधेरे में चले जायेंगे। कुछ समय बाद अधिकांश केचुएं नीचे चले जायेंगे और उपर वर्मीकम्पोस्ट रह जायेगा इसे उपर से इकट्टा कर लेवे। नीचे सतह पर वर्मीकम्पोस्ट के साथ केचुएं रह जायेंगे जिन्हें पुनः वर्मीकम्पोस्ट बनाने के काम में लेवे। वर्मीकम्पोस्ट के साथ केचुएं नहीं जाने देवें।
- वर्मीकम्पोस्ट से केचुएं अलग करते समय ढेर के नीचे के 1/10 वें भाग को बचाकर केचुएं सहित वर्मीकम्पोस्ट बनाये जाने वाले जीवांश पदार्थ डाले/इस ढेर में कोकून रहते हैं।

वर्मीकम्पोस्ट प्रयोग विधि :

- फलदार वृक्ष : परिपक्व बड़े पेड़ के चारों ओर प्रति पेड़ 5 किलो वर्मीकम्पोस्ट मिट्टी में सीधे डाले। इसके बाद इतना ही ताजा गोबर एवं जैविक पदार्थ डालकर नमी बनाये रखे। समय–समय पर गोबर एवं वानस्पतिक अवशेष डालते रहे।
- सब्जी वाली फसलें : प्रति हैक्टेयर साढ़े सात टन वर्मीकम्पोस्ट डालकर रोपाई/बीज की बुवाई करें।
- मौसमी फसलें : दो फसली क्षेत्र में पलेवा देकर अथवा भूमि में नमी उपलब्ध होने की अवस्था में प्रति हैक्टेयर 5 टन वर्मीकम्पोस्ट एवं गोबर व वानस्पतिक अवशेष की बराबर मात्रा मिलाकर खेत में संध्या समय एक सार बिखेर देवे एवं प्रातः हल चला देवे।

ग्रामीण विकास विज्ञान समिति (ग्राविस) एक गैरसरकारी, स्वैच्छिक संस्था है जो महात्मा गाँधी की विचारधारा से प्रेरित होकर थार मरूस्थल के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु प्रयासशील है। 1983 में स्थापित यह संस्था अब तक 50,000 परिवारों को लाभान्वित कर चुकी है। संस्था का कार्यक्षेत्र लगभग 850 गाँवों में फैला है तथा ग्राविस ने 1100 से अधिक सामुदायिक संगठनों को गठित किया है। अपने गम्भीर प्रयासों, अनुसंधान तथा प्रकाशनों के माध्यम से ग्राविस ने स्वैच्छिक जगत में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है।

ग्राविस

ग्राविस
3/437, 458, मिल्कमैन कॉलोनी,
पाल रोड़, जोधपुर, 342008
राजस्थान, भारत

फोन : 91 291 2785 317,
2785 549, 2785 116

फैक्स : 91 291 2785 116

ई मेल : email@gravis.org.in

वेबसाईट : www.gravis.org.in

Copyright(c) 2010 GRAVIS
All rights reserved.